E-Newsletter

# विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-
आजीवन शुल्क रु. ५००/-

बुद्धवर्ष 2564, ज्येष्ठ पूर्णिमा (ऑनलाइन), 5 जून, 2020, वर्ष 49, अंक 12

For online Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

## धम्मवाणी

**"यतो च भिक्खु आतापी, सम्पजञ्ञं न रिञ्चति।**
**ततो सो वेदना सब्बा, परिजानाति पण्डितो॥**

**"सो वेदना परिञ्ञाय, दिट्ठे धम्मे अनासवो।**
**कायस्स भेदा धम्मट्ठो, सङ्ख्यं नोपेति वेदगू"ति॥**

*संयुत्तनिकायपालि 2.203, वेदनासंयुत्तं, पहानसुत्तं.*

जब कोई तपस्वी साधक संप्रज्ञान (प्रज्ञा पर आधारित शरीर वा चित्त-संबंधी संपूर्ण जानकारी) को कभी नहीं छोड़ता है, तब वह ज्ञानी (व्यक्ति) सभी प्रकार की संवेदनाओं को भली प्रकार जान लेता है। वह संवेदनाओं को देखते-देखते उनका परिज्ञान कर इसी लोक में आश्रवहीन हो जाता है। संवेदनाओं का मर्मज्ञ ऐसा धर्मिष्ठ व्यक्ति काया छोड़ने पर (अर्थात, मरणोपरांत) ससीम (लोकों) को नहीं प्राप्त होता (अर्थात, अनिर्वचनीय परिनिर्वाण को प्राप्त कर लेता है, जिससे उसका अनित्य संसार में पुन: आवागमन नहीं होता)।

## दट्ठब्बसुत्त का पारायण

*(वेदनासंयुत्त, संयुत्तनिकाय) – श्री सत्यनारायण गोयन्काजी*

*धम्मगिरि, इगतपुरी, भारत, 18 जनवरी, 1994*

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स!!!

आओ, थोड़ी देर भगवत्-वाणी का पारायण कर लें और उसे समझने की भी कोशिश करें।

भगवान की वाणी में सर्वत्र अमृत ही अमृत भरा हुआ है। यह साधक के लिए अत्यंत प्रेरणा का स्रोत है और मार्गदर्शिका भी। अतः जो विषय हमारी साधना से सीधा संबंध रखता है, उसके एक-दो सूत्र पढ़ेंगे और उन्हें समझने की कोशिश करेंगे।

'वेदना' पर भगवान ने बहुत कुछ कहा है। हमें समझना चाहिए कि यही भगवान बुद्ध की सबसे बड़ी खोज थी। हमारी इंद्रियों के जो विषय हैं—आंख का विषय रूप है, कान का विषय शब्द है, नाक का विषय गंध है, जीभ का विषय रस है, त्वचा का विषय कोई भी स्प्रष्टव्य पदार्थ है और मन का विषय चिंतन है—इन विषयों में कहीं उलझ मत जाना, इन विषयों में कहीं रस मत लेने लगना। हो सकता है यह बात भगवान बुद्ध के पहले के लोगों ने भी कही हो, यह अनुसंधान का विषय है। लेकिन भगवान बुद्ध के बाद अध्यात्म के क्षेत्र में जो भी साहित्य का निर्माण हुआ, वहां सर्वत्र यही कहा गया- इंद्रिय विषयों के बंधन में मत बँध जाना। न उसे अच्छा मान कर उसके प्रति राग करना, न उसे बुरा मानकर उसके प्रति द्वेष करना। लगता है यह भारत के अध्यात्म की और उस परंपरा की चली आई हुई एक शिक्षा है और बहुत अच्छी शिक्षा है।

**भगवान बुद्ध ने इसमें एक नई कड़ी जोड़ी।** उन दिनों की भाषा में – *सळायतन* – ये हमारे छह दरवाजे हैं- छहों इंद्रियां, और जो इनके विषय हैं उनको भी *सळायतन* ही कहा गया- उनके बंधन से बचो। इतना ही कहकर नहीं रह गये क्योंकि उन्होंने शरीर और चित्त, तथा उनके पारस्परिक संबंधों का खूब गहराई तक अनुसंधान किया। बुद्धि-विलास नहीं बल्कि अनुभूतियों के स्तर पर अनुसंधान किया और उनके परे की अवस्था देखी, तो सारी बात समझ में आ गयी। जैसे हाथ में आंवला रखा हुआ हो, हथेली में उसे चारों ओर घुमा-फिरा कर देख लो, ऐसे सारी बात समझ में आ गयी। उन्होंने देखा कि ये इंद्रियां और इन इंद्रियों के विषय, तथा इनकी वजह से हमारे मन में राग-द्वेष का जागना, यह सच है- *सळायतन पच्चया फस्स*। ये छह इंद्रियां और जब इनका अपने-अपने विषयों से स्पर्श होता है, तब इस सच्चाई की बहुत गहराई वाली एक कड़ी और है- ***फस्स पच्चया वेदना।*** उस स्पर्श की वजह से शरीर पर कोई संवेदना जागती है। वह विषय अच्छा लगा तो सुखद संवेदना जागती है, बुरा लगा तो दुःखद संवेदना जागती है। लेकिन पहले संवेदना जागती है, उसके बाद तृष्णा जागती है या यों कहें उसी के आधार पर तृष्णा जागती है- *वेदना पच्चया तण्हा।* उसे समेटे रखने या दूर करने की तृष्णा, यानी, संवेदना अच्छी लगी तो उसको कैसे समेटे रखें और उसे बढ़ाएं; बुरी लगी तो उसे दूर करने की तृष्णा- दोनों तृष्णा ही हैं। ये तृष्णाएं जागीं तो बंधन शुरू हो गया।

ऊपर-ऊपर से लगता है कि यदि हम अपनी आंखों को रूप के विषय से दूर कर लें, कान को शब्द के विषय से, नाक को गंध के विषय से, जीभ को रस के विषय से, त्वचा को किसी स्प्रष्टव्य पदार्थ से दूर कर लें, तो छुटकारा हो गया। लेकिन नहीं, हमारा मानस तब भी भीतर ही भीतर सारे खेल खेलता रहता है। यद्यपि इस समय आंखों से कोई रूप दिख नहीं रहा है, पर आज के पहले कभी देखा था, अब उस रूप का चिन्तन चलता है - अच्छा है, बुरा है, अर्थात इस इंद्रिय का जो विषय है वह बंद नहीं हुआ, मन अपना काम किए जा रहा है। कान से कोई शब्द कभी सुना था- किसी ने गाली दी, किसी ने प्रशंसा की, चल रहा है मन में। ऐसे ही नाक से कोई गंध, जीभ से कोई रस, शरीर से लगा हुआ कोई स्प्रष्टव्य पदार्थ, इन सब पर मानस अपना खेल खेलते रहता है और उनकी वजह से संवेदनाएं होती रहती हैं। और उन संवेदनाओं की वजह से हम राग पैदा करते हैं, द्वेष पैदा करते हैं; आसक्ति पैदा करते हैं या उससे दुराव पैदा करते हैं, उसे दूर करने की कोशिश करते हैं। अंतर्मन की गहराइयों में यह क्रम चलता ही रहता है। मानस के ऊपरी-ऊपरी हिस्सों में मानस को रौंद कर, दबा कर हमनें किसी प्रकार से अपने आप को बचाने की कोशिश की; या मानस को किसी अन्य विषय में लगा कर के भुलावे में रखा- अरे, छोड़ो न इस गंध को, रस को; देखो इस समय यह इतनी अच्छी धर्म की बात है, इसका चिंतन

रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

करो। लेकिन नहीं, अंतर्मन में विचारों का वह ज्वार चलता ही रहता है।

भगवान बुद्ध की बोधि इसी बात की थी कि अंतर्मन की गहराई में क्या हो रहा है। अंतर्मन की गहराई में प्रतिक्षण शरीर पर जो संवेदनाएं हो रही हैं, उनका स्पर्श हो रहा है। यह धारा सतत चलती रहती है। जब तक हम जिंदा हैं *कायसम्फस्सजा वेदना*- काया के संस्पर्श से वेदना हो रही है। मन काया का स्पर्श कर रहा है, वेदना हो रही है, सुखद हो रही है, दुःखद हो रही है और उसकी प्रतिक्रिया चल रही है, तो कहां छुटकारा हुआ, भाई? भागने से समस्या का समाधान नहीं होता, पलायन करने से हम मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकते।

इसी को देखकर उन्होंने कहा, *पुब्बे अननुसुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।* यह सारा प्रपंच- चित्त और शरीर का, और उनकी वजह से उत्पन्न होने वाली संवेदनाओं का, और उन संवेदनाओं को ले कर प्रतिक्रिया करने का, यह सारा प्रपंच देख लिया। और देखते-देखते इनके परे की सच्चाई क्या है, वह भी देख ली। अरे! ऐसा तो कभी सुना ही नहीं था। कहां से सुनते, ऐसी कोई बात थी ही नहीं समाज में। बहुत होता तो, "ध्यान करो, अपने मन को कहीं और किसी बात में लगा लो, और छुटकारा हो गया"। छुटकारा नहीं हुआ, अंतर्मन की गहराइयों में क्या चल रहा है, उसे जानने का काम ही नहीं किया। तो यह *पुब्बे अननुसुतेसु*, पहले जो बात कभी सुनी ही नहीं, उसमें, *चक्खुं उदपादि*, ज्ञान के चक्षु खुले, अंतर्चक्षु खुले, *ञाणं उदपादि*, ज्ञान जागा, और बुद्धि के स्तर पर समझा कि यह क्या प्रपंच है। 'देख, सुखद लगता है, अच्छा लगता है- राग पैदा करते हैं, दुःखद लगता है- द्वेष पैदा करते हैं। यह क्या प्रपंच है?' इसे समझा, यानी, *पञ्ञा उदपादि*, अब केवल बुद्धि की बात नहीं, प्रत्यक्ष अनुभूति के स्तर पर समझा-- 'देख, यह संवेदना जागी न, और देख, यह अच्छी लगी तो राग जागने लगा न! संवेदना जागी, हमें अच्छी लगी, राग जागा और समाप्त भी हो गया। अरे, 'यह अनित्य है भाई, नश्वर है'। ऐसे ही देख, दुःखद संवेदना जागी, और उसके लिए प्रतिक्रिया होनी शुरू हुई- द्वेष जागा। नहीं अच्छी लगती, उसे दूर करें, उसे दूर करें- उसको भी जाना। और जब उसे देखना सीखा तो उसे देखते-देखते, अरे यह भी समाप्त हुई न! 'ओह! तो उत्पन्न होना, नष्ट हो जाना, यह इसका स्वभाव है। अरे, इसका स्वभाव ही अनित्य है, नश्वर है, भंगुर है। तब क्या पागलपन है, जो भंगुर है उसके प्रति क्या राग करें, उसके प्रति क्या द्वेष करें?' यों अपने चित्त को अंतर की गहराइयों तक सुधारते-सुधारते-सुधारते वेदनाओं के परे पहुँच गया, उस इंद्रियातीत अवस्था तक पहुँच गया, जहां इंद्रियां काम करती ही नहीं। अब रौंदने की जरूरत नहीं है, दबाने की जरूरत नहीं है। उस नैर्वाणिक अवस्था का साक्षात्कार हो गया जहां कोई इंद्रिय काम नहीं करेगी, शरीर और चित्त के परे की अवस्था है। उसे देख लिया तो सारा प्रपंच समझ में आ गया। अंतर्चक्षु जागे, ज्ञान जागा, प्रज्ञा जागी तो विद्या जाग गयी।

सही विद्या उसको कहते हैं जिससे सारी बात समझ में आ जाय। इसके पहले अविद्या ही अविद्या थी। जो दुःख है उसे सुख माने जा रहे हैं। ध्यान करते-करते बहुत बार सुखद संवेदना आई- बहुत अच्छा है, यहां तो बड़ा सुख है। अब समझ गये क्या सुख है इसमें? समाप्त होती है न, क्या सुख है? जान गये तो विद्या जागी। क्यों जागता है राग या द्वेष इसके प्रति, यह समझ में आ गया। इसे कैसे रोका जा सकता है, यह समझ में आ गया। और इसे रोक कर के इसके परे की अवस्था का कैसे अनुभव किया जा सकता है, यह समझ में आ गया। *विज्जा उदपादि*। सारी अविद्या समाप्त, इन सच्चाइयों को न जानने वाली सारी बातें दूर हो गयीं, तो जान गये- *आलोको उदपादि*। इंद्रियों के परे की वह अवस्था, जहां अंधकार नहीं है, जहां प्रकाश ही प्रकाश है। पर ध्यान करते हुए यह जो कभी-कभी उग्गह निमित्त जागता है- आंख के सामने प्रकाश की कोई थोड़ी-सी एक झलक आई फिर दूर हो गयी। यह थोड़ी देर के लिए पटिभाग निमित्त जागता है, जो उस आलोक से बहुत परे है। उसकी तुलना न सूरज की रोशनी से की जा सकती है, न चन्द्रमा की रोशनी से की जा सकती है, न सितारों की रोशनी से। किसी प्रकार की इस सांसारिक, लोकीय रोशनी से उसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती, ऐसा *आलोको उदपादि*। जब *पुब्बे अननुसुतेसु धम्मेसु*, यह ढूंढ़ निकाला तब बुद्ध बुद्ध हुए, अन्यथा बुद्ध नहीं। *चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादी'ति।*

वेदना का बहुत बड़ा महत्त्व है। आज इस वेदना से संबंधित एक-दो सूत्र का पारायण करेंगे।

## तीन प्रकार की वेदनाएं

*तिस्सो इमा, भिक्खवे, वेदना*। 'हे भिक्षुओ!' जब भगवान 'भिक्षु' शब्द का प्रयोग करते हैं, तब यह ठीक है कि उनके इर्द-गिर्द अधिकांशतः गृहत्यागी, पीत-वस्त्रधारी भिक्षु ही रहते थे, पर उन्होंने यह विद्या केवल उन भिक्षुओं को ही नहीं सिखाई, गृहस्थों को भी सिखाई। उनके समय में एक नहीं, दो नहीं, लाखों की संख्या में लोग स्रोतापन्न अवस्था में, सकदागामी अवस्था में, अनागामी अवस्था में गृहस्थ थे, और थोड़े गृहस्थ तो ऐसे थे जो गृहस्थ रहते हुए ही अरहन्त अवस्था तक पहुँचे थे। विद्या सबने सीखी थी। तो जब यह कहेंगे- 'भिक्षुओ!' तो गृहस्थ हो या संन्यासी हो, जो-जो अपने दुःखों का भेदन करने के काम में लग गया, अपने दुःखों से छुटकारा पाने के काम में लग गया, वही भिक्षु, तो इसलिए उनको कहा गया- 'भिक्षुओ'।

*कतमा तिस्सो*? कौन-सी तीन हैं? तो कहते हैं, *सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना।* आज भारत में ही नहीं, भारत के बाहर भी हमने देखा, श्रीलंका में भी, बर्मा में भी, थाईलैंड में भी, कम्बोडिया में भी- आज की उनकी भाषा में तथा भारत की सभी भाषाओं में, 'वेदना' का अर्थ केवल दुःख ही रह गया और वह ठीक भी है। परंतु भगवान की अपनी वाणी है कि सारी वेदनाएं- जो हैं वे दुःख ही हैं। शायद इसी कारण हो सकता है यह बात फैल गयी हो। लेकिन आज जब कोई कहे 'सुखद वेदना' तो लोगों के कान खड़े होंगे, वेदना है तो वह सुखद कैसे हुई? वेदना तो पीड़ा को कहते हैं, तो पीड़ा सुखद कैसे हुई? इसे समझना चाहिए। इसीलिए यहां आने पर वेदना शब्द का प्रयोग न करके 'संवेदना' शब्द का प्रयोग करना शुरू किया, ताकि लोग समझें कि यह सुखद भी होती है, दुःखद भी होती है, और ऐसी भी होती है जो न सुखद है न दुःखद। इस प्रकार तीन प्रकार की वेदनाओं की बात कही गयी।

*सुखा, भिक्खवे, वेदना दुक्खतो दट्ठब्बा,* अब यह उनका उपदेश शुरू होता है, कि भाई! जो सुख वेदना है न, इसको कहीं सुख न मान लेना, क्योंकि वस्तुतः सुखद नहीं है, बल्कि एक भ्रांति है, एक माया है, एक मरीचिका है। बड़ा अच्छा लगा, अरे धारा-प्रवाह चली बड़ा अच्छा लगा- तरङ्गें ही तरङ्गें, तरङ्गें ही तरङ्गें। यह बिजली का-सा करन्ट चला, अरे, बड़ा अच्छा, बड़ा अच्छा। और अब समाप्त हो गया न? तो क्या अच्छा? और इसी को सब कुछ मान कर कहीं अटक जाते तो आगे कदम नहीं रख पाते न? तब मुक्त अवस्था तक कैसे पहुँचते? यदि इसके चक्कर में पड़ गया कि यह सुखद वेदना ही अंतिम लक्ष्य है हमारी साधना का, तो मुक्त अवस्था तक नहीं पहुँचेगा। अरे यह

दुःखद है, भाई, जो हमको सुखद लग रही है, वह केवल लग रही है, वास्तविक स्थिति यह है कि यह दुःखद है। आगे वे कहते हैं—

*दुक्खा वेदना सल्लतो दट्ठब्बा*, जो दुःखद संवेदना है, अरे, वह तो ऐसी है जैसे कोई तीर लगा हो, कोई भाला धँसा हो। बाहर निकलना है इसके। यह कैसा जीवन है! प्रतिक्षण भीतर ही भीतर, कभी सुखद चलता है, कभी दुःखद चलता है, इन दोनों के बाहर निकलना है न! तो सुखद को भी दुःखद है, यही समझेगा। बुद्ध ने कहा इसलिए मानते हैं, कुछ नहीं पल्ले पड़ेगा। अनुभूति से समझेगा, यह जो सुखद है यह समाप्त हुई तो दुःख ही है न! अरे जो दुःखद है, और अधिकांशतः दुःखद ही रहती है, वह तो जैसे तीर लगा है। कितने जन्मों से यह तीर लगा हुआ है। कितने जन्म बिताए दुःख ही दुःख में। तीर लगा है न, दुःख का तीर लगा है। भाला धँसा हुआ है, और जीवन बिताए जा रहे हैं उसमें। एक जीवन के बाद दूसरा जीवन, दूसरे जीवन के बाद तीसरा... अंत नहीं, किस कदर उलझ गये, इसके बाहर निकलना है। तो दुःखद को यों समझें कि जैसे हमारे भीतर तीर लगा है- यह भवचक्र का तीर है। भवचक्र का यह तीर जब तक है तब तक इस तरह के दुःख आने ही वाले हैं। कभी इस बात को लेकर दुःखी, कभी उस बात को लेकर दुःखी। और उसकी वजह से शरीर में इस प्रकार की दुःखद संवेदना या उस प्रकार की दुःखद संवेदना। यह दुःख पीछे लग गया, भव-तृष्णा का तीर जो लगा है, भव-संसरण का तीर जो लगा है, उसके बाहर निकलने की विद्या मिली, नहीं तो दुःख ही दुःख, दुःख ही दुःख।

*अदुक्खमसुखा वेदना अनिच्चतो दट्ठब्बा*। अब यह *दट्ठब्बा*, इस शब्द को भी समझना चाहिए। जैसे कहें विपश्यना, तो पश्यना माने देखना है। *दट्ठब्बा* – देखो, देखना है। आज के भारत में इस शब्द का एक रूढ़ अर्थ हो गया, जिसने सारी साधना ही भुला दी। हम भूल गये कि साधना क्या होती है, मुक्ति का मार्ग क्या होता है। आज तो देखना शब्द का अर्थ हो गया- कोई रूप देखो, कोई रंग देखो, कोई रोशनी देखो, कोई आकृति देखो, आंख का प्रयोग करो, तो जो सामने आया उसे देख लिया। नहीं-नहीं, भारत की पुरानी भाषा में वह अर्थ भी था, लेकिन साधना के क्षेत्र में बिल्कुल भी नहीं, जरा-सा भी नहीं। अनुभव करो! रूप नहीं देखना है। सुखद संवेदना आई तो उसका क्या रूप देखोगे? वह काली है, कि गोरी है, कि प्रकाशमान है, कि अंधेरी है, क्या देखोगे? इस आकृति की है कि उस आकृति की है? नहीं, अनुभव करो, सुखद संवेदना है उसे अनुभव किया- सुखद है। दुःखद है तो दुःखद है, असुखद है तो असुखद है, अदुःखद है तो अदुःखद है—उसको अनुभव करो। आज के भारत की भाषा में भी वह पुराना देखने का अर्थ प्रयुक्त होता है। हम भूल गये, कभी ध्यान से देखते नहीं, अपनी भाषा को हमने ध्यान से समझा ही नहीं। जैसे एक आदमी

**नये उत्तरदायित्व**

**वरिष्ठ सहायक आचार्य**

1. श्रीमती कुमकुम रावत, कोलकाता
2. श्री अनिल माळी, जळगांव
3. श्रीमती मीना काटे, सोलापुर

**नव नियुक्तियां**

**सहायक आचार्य**

1. श्रीमती विनीता पाटिल, कोल्हापुर
2. श्रीमती सुधा भूतड़ा, भोपाल
3. श्रीमती जाकिया सुलताना रिजवी, मुंबई
4. Ms Risara Jaksuwan, Thailand

**बाल-शिविर शिक्षक**

1. डॉ. संतोष व्यवहारे, शिरूर
2. श्रीमती सीमा व्यवहारे शिरूर

## विपश्यना साधना संबंधी तत्काल जानकारी हेतु निम्न शृंखलाओं (लिंक्स) का अनुसरण (क्लिक) करें--

- वेबसाइट (Website) – *www.vridhamma.org*
- यू-ट्यूब (YouTube) – विपश्यना ध्यान की सदस्यता लें – *https://www.youtube.com/user/VipassanaOrg*
- ट्विटर (Twitter) – *https://twitter.com/VipassanaOrg*
- फेसबुक (Facebook) – https://www.facebook.com/Vipassanaorganisation
- इंस्टाग्राम (Instagram) – *https://www.instagram.com/vipassanaorg/*
- Telegram Group for Students – https://t.me/joinchat/AAAAAFcI67mc37SgvlrwDg

**"विपश्यना साधना मोबाइल ऐप" डाउनलोड करके आनापान तथा अन्य सुविधाओं का लाभ उठायें:**

**गूगल एंड्रॉयड:** *https://play.google.com/store/apps/details?id=com.vipassanameditation*

**एप्पल iOS:** *https://apps.apple.com/in/app/vipassanameditation-vri/id1491766806*

**विपश्यना साधना करने वाले साधकों की सुविधा के लिए:**

"विपश्यना साधना मोबाइल ऐप" पर रोज़ाना सामूहिक साधना का सीधा प्रसारण होता है (केवल पुराने साधकों के लिए)--

**समय:** प्रतिदिन प्रातः **8:00 बजे से 9:00** बजे तक; दोपहर **2:30 से 3:30** बजे; सायं **6:00 से 7:00** बजे (IST + 5.30GMT)

और अतिरिक्त सामूहिक साधना – प्रत्येक रविवार को।

अन्य लोग भी वर्तमान परिस्थितियों से निपटने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में '**आनापान' ध्यान-साधना** का अभ्यास करें।

इस सार्वजनीन 'आनापान' का अभ्यास करने के लिए :

i) उपरोक्त प्रकार से 'विपश्यना साधना मोबाइल ऐप' डाउनलोड करें और उसी को चलायें। या

ii) *https://www.vridhamma.org/Mini-Anapana* पर **मिनी आनापान** चलायें।

iii) **ऑनलाइन प्रसारण द्वारा 'सामूहिक आनापान सत्र'** में शामिल होने के लिए निम्न लिंक पर पुराने साधक के रूप में अपने आप को रजिस्टर करें – *https://www.vridhamma.org/register*

- स्कूलों, सरकारी विभागों, निजी कंपनियों और संस्थानों के अनुरोध पर **विशेष समर्पित आनापान सत्र** भी आयोजित किए जाते हैं।

**बच्चों के लिए आनापान सत्रः** उम्र 8 - 16 वर्ष – VRI ऑनलाइन 70 Min. के आनापान सत्र आयोजित करा सकते हैं।

कृपया स्कूलों और अन्य शैक्षणिक संस्थानों के लिए और ऑनलाइन सत्रों की अनुसूची के समर्पित सत्रों के लिए ईमेल – *childrencourse@vridhamma.org* पर पत्र लिखें।

• रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020

कहता है, 'देख, यह रसगुल्ला बड़ा मीठा है, तू खा कर तो देख!' तो खा कर क्या देखे? खा कर उसका रूप देखे, कि उसका रंग देखे, क्या देखे? खा कर उसका अनुभव करके देख, कैसा है। यह मखमल बड़ी मुलायम है, अरे जरा छू कर तो देख। छू कर क्या देखे, उसका रंग देखे? यह गंध बड़ी ही सुगंधित है, बड़ी अच्छी है, सूंघ कर तो देख! यह 'देख' शब्द आज भी अपनी भाषा में इस्तेमाल होता है, अनुभव करने के अर्थ में। और साधना में तो अनुभव की ही बात है। विपश्यना, तो अनुभव करना, *दट्ठ*, अनुभव करना, *दट्ठब्बा*, अनुभव करने योग्य। ये सारे अनुभव के रूप में लेने चाहिए। रूप, रंग, रोशनी, आकृति से उसका कोई दूर-परे का भी संबंध नहीं, यह बात समझ लेनी चाहिए।

## सम्यक-दर्शी

*यतो खो, भिक्खवे, भिक्खुनो सुखा वेदना दुक्खतो दिट्ठा होति, दुक्खा वेदना सल्लतो दिट्ठा होति, अदुक्खमसुखा वेदना अनिच्चतो दिट्ठा होति,* जब किसी भिक्षु को ऐसा होने लगे, कि 'ये जो सुख वेदना है, अरे यह तो दुःखद है न, यह जो दुःखद वेदना है यह तो तीर की तरह दुःख देने वाली है न, और यह जो असुखद-अदुःखद वेदना है यह तो अनित्य है न' तब– *अयं वुच्चति, भिक्खवे,* तब यह कहा जाए, कि *भिक्खु सम्मद्दसो,* अब इसका दर्शन 'सम्यक दर्शन' होने लगा।

अब कहां उलझ गये सम्यक दर्शन को ले कर के – हमारी दार्शनिक मान्यता ये, इसको मानने वाला व्यक्ति तो सम्यक-दर्शी, इस पर श्रद्धा रखने वाला व्यक्ति तो सम्यक-दर्शी, और जो इस पर श्रद्धा नहीं रखता है, नहीं मानता है वह मिथ्या-दर्शी – अरे, क्या लेना-देना उस बात से? दर्शन हुआ, अनुभूति हुई- अनुभूति सम्यक रूप से हुई, सही तरीके से हुई। अन्यथा अनुभूति हुई, सुख आया हमने राग जगाना शुरू कर दिया, तो सम्यक अनुभूति कहां हुई? अनुभूति हुई, दुःख आया और हम रोने लगे, तो अनुभूति तो हुई, सम्यक कहां हुई? असुख-अदुःख आया, और हमने उसी को अंतिम अवस्था मान लिया, तो सम्यक अनुभूति कहां हुई? उसके सही स्वभाव को देख रहे हैं, और साक्षी भाव है, भोक्ता भाव नहीं है, तो उसे कहना चाहिए कि सम्यक दर्शन होना शुरू हो गया। दुःख है, इसका सम्यक दर्शन; दुःख का कारण है, उसका अनुभूति के स्तर पर सम्यक दर्शन; उसको दूर करने का उपाय है, उसका सम्यक दर्शन, और वह दूर हो गया, उस अवस्था का सम्यक दर्शन- तो *सम्मद्दसो*।

ऐसा होता है तब क्या होता है? *अच्छेच्छि तण्हं*, काट दिया तृष्णा को। तृष्णा का जो बन्धन हमें बांधे हुए था, ऐसा करते-करते, सम्यक रूप से देखते-देखते, सारी तृष्णा के बन्धन को काट फेंकता है। *विवत्तयि संयोजनं*, वह संयोजन जो हमें बाँधे हुए है, वह संयोजन जो हमें लपेटे हुए है, उसका विवर्तन शुरू कर दिया उसने, उसको खोलना शुरू कर दिया। जो बन्धन थे खुलते जा रहे हैं, खुलते जा रहे हैं, संयोजन हमारा दूर होते जा रहा है। *सम्मा मानाभिसमया*, बड़ा कठिन काम है, यह सारा कुछ करते हुए भी साधक का 'मैं' नहीं निकलता। मैं, मैं कर रहा हूं, मैं बन्धन में हूं, मुझे मुक्त होना है, मैं मुक्त हो कर रहूंगा, इस प्रकार चल कर मुक्त हो जाउंगा, मैं-मैं, मेरा-मेरा, ऊंची अवस्था पर जा कर भी छूटता नहीं। तो, यह जो मान है, 'मैं, मेरे' का भाव है, उसे खूब अच्छी तरह समझ लेता है, यह कैसा पागलपन है, यह मैं और मेरे के नाम पर क्या पागलपन चल रहा है, तो उसको *मानाभिसमया*। और, *अन्तमकासि दुक्खस्सा*, फिर ऐसी अवस्था में पहुँच जाता है, जहां दुःखों का नितांत समापन हो गया, है ही नहीं, अंत हो गया।

यह सारा कब होता है? जब कि सुखद संवेदना को दुःखद जैसा माने, दुःखद संवेदना को तीर चुभा हुआ दुःख जैसे माने, और असुखद-अदुःखद को अनित्य है, ऐसा समझे, तब उस अवस्था तक पहुँचता है। विपश्यना किस तरह से की जाए, यह सारा इसमें समझाया हुआ है।

***यो सुखं दुक्खतो अद्द, दुक्खमद्दक्खि सल्लतो।***

*यो सुखं दुक्खतो अद्द*, *अद्द* का अर्थ यहां, जैसे आगे *अद्दक्खि*, उसी भाव में, कि जो सुख को दुःख जैसे देखता है, यह दुःख है, ऐसा समझता है। *दुक्खमद्दक्खि सल्लतो*, जो दुःख है उसे तीर चुभे हुए पीड़ा की तरह देखता है, समझता है। और-

***अदुक्खमसुखं सन्तं, अद्दक्खि नं अनिच्चतो॥***

*अदुक्खमसुखं सन्तं,* इसे समझना चाहिए- साधना करते हुए बहुत बार इस प्रकार की अनुभूति होती है, जिसे हम नहीं कह सकते सुखद है, जिसे हम नहीं कह सकते दुःखद है। लेकिन यह बहुत सतही-सतही स्तर पर है, ऊपरी-ऊपरी स्तर पर है। भगवान जब असुख-अदुःख की बात करते हैं, तो बहुत गहराई की बात करते हैं। इसलिए *सन्तं* शब्द का इस्तेमाल किया। ध्यान करते-करते उदय-व्यय, उदय-व्यय, उदय-व्यय, फिर भङ्ग-भङ्ग-भङ्ग, यों करते-करते हम *ओळारिको*, स्थूल से सूक्ष्मता की ओर चले जा रहे हैं, *सुखुमा-सुखुमा-सुखुमा*। आगे बढ़ते-बढ़ते एक ऐसी अवस्था आती है, कि भीतर अनुभव हो रहा है, लेकिन नहीं कह सकते कि यह सुखद संवेदना है, नहीं कह सकते कि यह दुःखद संवेदना है, बड़ी शांति है, '*सन्तं*', बड़ी शांति है। मानस की उन गहराइयों में जहां बहुत से विकार निकल गये। बहुत से विकार निकल गये तो भीतर एक बड़ी शांति, एक बड़ी प्रश्रब्धि, ऐसी शांति है कि उस समय पता ही नहीं लगता कि इसमें कोई उत्पाद-व्यय हो रहा है। क्योंकि इतनी सूक्ष्म अवस्था में उत्पाद-व्यय हो रहा है कि मानस उसे नहीं पहचान सकता। तब अधिकांशतः यह कठिनाई होती है, यह खतरा होता है- साधक समझ लेता है कि मुझे अंतिम अवस्था मिल गयी। *निब्बानं परमं सुखं*- निर्वाण में बहुत सुख-शांति होती है, तो हमें तो सुख-शांति मिल गयी। देखो कितनी शांति है, आ गया न! नहीं, धोखा हो जायगा, अविद्या है, तुम्हें होश नहीं है। अभी इंद्रिय क्षेत्र में ही गुजर रहे हो।

बहुत साधक आते हैं, जो महीने के कोर्स में बैठते हैं, डेढ़ महीने के कोर्स में बैठते हैं। आते हैं कि 'हमें निर्वाणिक अनुभूति हो गयी'। क्या हुआ भाई? भीतर इतनी शांति मिली, इतनी शांति मिली। बड़ी अच्छी बात। अब कभी ऐसी अवस्था आए, तो जरा देख लेना, आंख खोल कर के देखना कि तुम्हारी आंख काम कर रही है क्या? कान से सुन कर देखना, सुनाई दे रहा है न! यों सभी इंद्रियों को देखना। चुट्टी काट कर देखना, शरीर में मालूम हो रहा है न कुछ? अरे, तो काहे का निर्वाण आया भाई? अभी इंद्रिय-अवस्था है न? हां, इंद्रिय अवस्था में शांति आई, यह बड़ी अच्छी बात है, पर यह अंतिम लक्ष्य नहीं है! अभी इसके और आगे जाना है। बहुत ध्यान से देखेंगे तो उसमें भी एक बहुत नन्हा-सा, बहुत सूक्ष्म-सा, उदय-व्यय, उदय-व्यय, उदय-व्यय चल रहा है। उत्पन्न होता है नष्ट होता है, बड़े सूक्ष्म स्तर पर हो रहा है- यह भी अनित्य है, ऐसा समझता जायगा। अन्यथा, उसी को नित्य, शाश्वत, ध्रुव मान लेगा, तो अविद्या में पड़ गया, बेहोशी में पड़ गया, मोह-मूढ़ता में पड़ गया। अरे नहीं! अभी मेरी इंद्रियां काम कर रही हैं। वह तो इंद्रियों के परे की अवस्था है, अभी वह नहीं आई। इसको ध्यान से देखूं तो सही। यह जो असुख-अदुःख की अवस्था है, उस अवस्था को भगवान कहते हैं- वह जो बहुत शांत अवस्था है, वहां जा कर के अनित्यबोध को और दृढ़ करना है। अनुभूति के स्तर पर और दृढ़ करना पड़ता है। तब साधक छलांगें लगाता हुआ आगे बढ़ जाता

है और इंद्रियों के परे की अवस्था में पहुँच जाता है। मन अटक गया तो यह बीच की धर्मशाला है। बीच की धर्मशाला में ही अटक गया तो आगे बढ़ना बंद हो जायगा।

हमनें अपने अनुभव से भी देखा और अनेकों के अनुभव से भी, जो-जो लोग किसी प्रकार की दार्शनिक मान्यता में उलझे हुए हैं, उनके लिए वह दार्शनिक मान्यता ही प्रमुख है। मुक्त हो जाना उनके लिए प्रमुख नहीं। विकारों से छुटकारा पा लेना उनके लिए प्रमुख नहीं। उनके लिए प्रमुख है कि हमारी जो मान्यता है दर्शन की, वह कैसे सिद्ध हो, और उसको हम अनुभूति पर उतारें। तो जहां इस तरह की अवस्थाएं आने लगीं, सारा शरीर केवल तरङ्गें ही तरङ्गें, तरङ्गें ही तरङ्गें, यह तो बहुत ऊपरी-ऊपरी अवस्था है अभी। इसे ही यह समझें कि बस, एक-एक अणु चेतन हो उठा तो 'हमें परम-चैतन्य की अनुभूति हो गयी, तो ईश्वर की अनुभूति हो गयी, ब्रह्म की अनुभूति हो गयी, हम मुक्त हो गये', ऐसा समझने वाला व्यक्ति आगे कैसे बढ़ेगा? उस चेतन अवस्था से, उससे भी ऊंचे की एक शांत अवस्था आई, और उसी को कह दिया कि यह परम-शांति की अवस्था है, यह ईश्वर के दर्शन की अवस्था है, उसकी अनुभूति की अवस्था है, या यह हमारी आत्मा की अनुभूति की अवस्था है- तो उलझा है, अपनी मान्यताओं में उलझा है न? सच्चाई यह कि तुम्हारी मान्यता जो कुछ भी है, उसे एक ओर रखो भाई! तुम अनुभूति पर उतरो, हर बात अनुभूति, अनुभूति, अनुभूति। यह मान कर चलो कि अंतिम अवस्था इंद्रियों के परे की अवस्था है, तो हर पड़ाव पर यह देखते रहो कि यह जो अवस्था आई, अभी इंद्रियों के क्षेत्र में ही हैं न? इंद्रियों के क्षेत्र में हैं तो निश्चय ही यह अनित्य है, और ध्यान से देखेंगे तो साफ मालूम होगा- अनित्य है। तब ठीक रास्ते चलता चला जायगा। अन्यथा, आरोपण करने लगेगा, जो अनित्य है उस पर नित्य का आरोपण करने लगा। जो दुःख है, उस पर सुख का आरोपण करने लगा। जो मैं नहीं, मेरा नहीं, उस पर मैं-मेरे की किसी दार्शनिक मान्यता का आरोपण करने लगा तो सारा रास्ता रुक जायगा। बस गाड़ी रुक गयी, आगे जा ही नहीं पायगा।

ऐसा बहुतों में देखा। आते हैं भागे-भागे—हमने आत्मा का दर्शन कर लिया, हमने आत्मा से आत्मा को देख लिया। अजीब है, तुमने आत्मा से आत्मा को देख लिया, क्या देख लिया? बस यही देख लिया कि ऐसी कोई अवस्था आई, हमने आत्मा से आत्मा को देख लिया, हमने परमात्मा को देख लिया, हमने यह देख लिया, हमने वह देख लिया। अरे, अनित्य है भाई! जो अनित्य है उसको अनित्य ही मानो, और फिर देखो कैसे आगे बढ़ते हो। यह जो तीसरी अवस्था है बड़ी शांति की अवस्था है, उसको कहीं अंतिम अवस्था न मान लेना, वह भी अनित्य है। यह समझते हुए, यह अनुभव करते हुए आगे बढ़ोगे तो तेजी से बढ़ जाओगे।

''*स वे सम्मद्दसो भिक्खु,* उस तरह का कोई भिक्षु, साधना करने वाला जिस प्रकार का सम्यक दर्शन किए जा रहा है- सच्चाई को यथाभूत देखना सम्यक दर्शन है। जैसी है, वैसी है, इसका स्वभाव अनित्य है तो अनित्य है, यह दुःखद है तो बड़ी पीड़ादायक है, यह सुखद है तो यह भी दुःख ही है, यों उसको सम्यक रूप से देखता है, तब *परिजानाति वेदना।* बार-बार सुना है यह परिजानाति शब्द- तो वेदनाओं की सारी परिधि देख गया, उसकी जो सीमा है, जहां-जहां वेदना है, वह सब देख गया। चाहे सुखद है, चाहे दुःखद है, चाहे असुखद-अदुःखद शान्त है, सब देख गया। वह सब देख गया कि नहीं देख गया; उसने परिपूर्ण रूप से इस क्षेत्र की जानकारी कर ली कि नहीं कर ली, उसका क्या प्रमाण? एक ही प्रमाण- कि **उसके परे की अवस्था देख ली कि नहीं?** देख लिया तो पता लग गया कि यह वेदनाओं का खेल यहीं तक था, इसके आगे नहीं है। तब उसको परिजानाति कहें। तो इस भाव में कहते हैं कि *परिजानाति वेदना,* वेदना के सम्पूर्ण क्षेत्र को देख गया, कुछ बाकी नहीं रह गया, कोई कोना-किनारा बाकी नहीं रह गया, सब के परे चला गया।

*सो वेदना परिञ्ञाय,* ऐसा व्यक्ति, वेदनाओं को जान कर के, उसके सारे क्षेत्र को जान कर के, *दिट्ठे धम्मे अनासवो,* अब देख लिया उसने, उसका साक्षात्कार कर लिया। किसका? उस अवस्था का, जो किसी को अनाश्रव बना देती है। आश्रव सारे समाप्त हो गये। आश्रव जब तक हैं, जब तक मन में मैल है, तब तक अरहन्त अवस्था नहीं प्राप्त हुई, नितांत मुक्त अवस्था नहीं प्राप्त हुई। वह वेदना के क्षेत्र को देख कर के, उसके परे जा कर के, उस अवस्था पर पहुँच गया कि जहां उसने अनाश्रव अवस्था का साक्षात्कार कर लिया।

ऐसा व्यक्ति, *कायस्स भेदा,* उसकी काया का भेदन होता है, यानी, उसकी मृत्यु होती है तो *धम्मट्ठो,* वह व्यक्ति धर्मिष्ठ हो गया। बौद्ध धर्म में पक गया ऐसा नहीं, हिन्दू धर्म में पक गया ऐसा नहीं, जैन धर्म में पक गया, बिल्कुल नहीं, बावले लोगों की बातें हैं। उसमें उलझे रह जाओगे तो धर्म नहीं मिलेगा। हिन्दू धर्म मिल जायगा क्योंकि हिन्दुत्व का प्रभुत्व है वहां पर; बौद्ध धर्म मिल जायगा क्योंकि बुद्ध की बातों का प्रभुत्व है वहां पर- केवल बातें, अनुभव कुछ नहीं; जैन धर्म मिल जायगा, क्योंकि जैनियों का प्रभुत्व है वहां पर। कुछ नहीं मिलेगा। धर्म माने जो सच्चाई है, प्रकृति के जो नियम हैं, उनको जान गया तो धर्मिष्ठ हुआ, जीवन में धर्म उतरने लगा। ऐसा व्यक्ति काया का भेदन होने पर, यानी, मृत्यु होने पर क्या होता है उसका? सारी वेदनाओं के क्षेत्र को जो जान गया वह 'वेदगू' हुआ। वेदना के सारे क्षेत्र को जानने वाला व्यक्ति, *सङ्ख्यं नोपेति वेदगू* हो गया। क्या *सङ्ख्यं*? माने, इस इंद्रिय जगत का सारा खेल, लोकीय जगत का सारा खेल, निरय लोक से ले कर के अरूप ब्रह्म लोक तक का सारा क्षेत्र *सङ्ख्यं* है। गिना जा सकता है। कितना बड़ा है, क्या है, इसका वर्णन किया जा सकता है। लेकिन वह तो वर्णनातीत अवस्था में पहुँच गया। उस अवस्था में पहुँच गया कि जिसका कोई वर्णन नहीं हो सकता, निर्वाणिक अवस्था में चला गया। ऐसा अरहन्त मृत्यु के बाद उस अवस्था में पहुँच गया जो वर्णनातीत है। अब उस वर्णनातीत अवस्था से फिर वापस इस वर्णन वाली अवस्था में नहीं आता वह। वह जो अनन्त की अवस्था है उसमें से हो कर के फिर दुबारा इस अवस्था में नहीं आता जिसको कि गिना जा सके, जिसको माप करके बताया जा सके। यानी, सदा के लिए मुक्त हो गया, और सारा लक्ष्य साधक का यही है कि इस भवचक्र के बाहर कैसे आए। इन संवेदनाओं का परिज्ञान इसलिए कर रहे हैं कि चाहे रूप ब्रह्मलोक हो, अरूप ब्रह्मलोक हो, वहां तक भी, यह उत्पाद-व्यय, उत्पाद-व्यय का क्षेत्र चल रहा है। वहां इसके परे की अवस्था नहीं आई। उन सब को पार कर जायगा, तब देखेगा अब यह उत्पाद-व्यय समाप्त हो गया, अब यह वेदना का सारा क्षेत्र समाप्त हो गया, अब यह इंद्रियों का क्षेत्र समाप्त हो गया, पहुँचना वहां तक है। उसके लिए इस छोटे से सूत्र में सारा मार्ग बता दिया, सारी विधि बता दी।

भवतु सब्ब मङ्गलं।

## विपश्यना विशोधन विन्यास (VRI)

विपश्यना विशोधन विन्यास (Vipassana Research Institute) एक लाभ-निरपेक्ष शोध-संस्थान है। इसका मुख्य उद्देश्य है विपश्यना-विधि की वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक शोध करना। इस वैज्ञानिक शोध को आगे बढ़ाने के लिए साधकों का सहयोग अत्यंत आवश्यक है। अतः जो भी साधक-साधिकाएं इस पुण्यकार्य में

भाग लेना चाहें, वे निम्न पते पर संपर्क करें। इस संस्था में दानियों के लिए सरकार ने आयकर अधिनियम 1961 की धारा 35-(1) (iii) के नियमानुसार 100% आयकर की छूट दी है। आप इसका लाभ उठा सकते हैं। दान के लिए-- बैंक विवरण इस प्रकार है—विपश्यना विशोधन विन्यास, ऐक्सिस बैंक लि., मालाड (प.) खाता क्र. 911010004132846; IFSC Code: UTIB0000062; संपर्क- श्री डेरिक पेगाडो, मो. 9921227057, या श्री बिपिन मेहता, मो. 9920052156; A/c. Office: 022-50427512 /50427510;

वेबसाइट- https://www.vridhamma.org/donateonline

## विपश्यना ध्यान का परिचय

मुंबई विश्वविद्यालय के सहयोग से विपश्यना विशोधन विन्यास (वि.आर.आई.) हर साल 3 महीने के लघु पाठ्यक्रम –'विपश्यना ध्यान का परिचय'— का संचालन करता है। यह लघु पाठ्यक्रम जो ८ जुलाई से २३ सितंबर २०२० तक आयोजित होने वाला था, अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया गया है। कोविड -१९ महामारी को मद्देनजर रखते हुये चालू शैक्षणिक वर्ष (२०२०-२१) के लिए मुंबई विश्वविद्यालय से इसके बारे में परिपत्र जारी होने के बाद पाठ्यक्रम आयोजित किया जायगा। जैसे ही वि.आर.आई. विश्वविद्यालय से जानकारी प्राप्त करेगा, पाठ्यक्रम की नई तारीखें समाचार पत्र में घोषित की जाएंगी। असुविधा के लिए हमें खेद है।

### पालि-हिन्दी (४५ दिन) / पालि-अंग्रेजी (६० दिन)

साल २०२० के लिए विपश्यना विशोधन विन्यास (वि.आर.आई.) द्वारा संचालित **पालि-हिन्दी** और **पालि-अंग्रेजी** दोनों आवासीय पाठ्यक्रम कोविड-१९ महामारी को मध्यनजर रखते हुये रद्द कर दिये गये हैं। वि.आर.आई. की जल्द ही **ऑनलाइन पालि-अंग्रेजी पाठ्यक्रम** शुरू करने की योजना है। पाठ्यक्रम की तारीखें और विवरण इस महीने के अंत तक वि.आर.आई. की वेबसाइट पर प्रदर्शित किये जाएंगे।

वि.आर.आई. द्वारा ६ अप्रैल २०२० को **ऑनलाइन पालि-हिन्दी** पाठ्यक्रम शुरू किया है। शुरुआत से पाठ्यक्रम के रिकॉर्ड किये गये सत्र वि.आर.आई. की वेबसाइट www.vridhamma.org पर उपलब्ध हैं। अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें: mumbai@vridhamma.org; फोन संपर्क- +९१ ९६१९२३४१२६ / +९१ (२२) ५०४२७५६० / +९१ (२२) २८४५१२०४ वि.५६० (सुबह ९:३० से शाम ५:३० तक)

## धम्मालय-2 (आवास-गृह) का निर्माण कार्य

पगोडा परिसर में 'एक दिवसीय' महाशिविरों में दूर से आने वाले साधकों तथा धर्मसेवकों के लिए रात्रि-विश्राम की निःशुल्क सुविधा हेतु "धम्मालय-2" आवास-गृह का निर्माण कार्य होगा। जो भी साधक-साधिका इस पुण्यकार्य में भागीदार होना चाहें, वे कृपया निम्न पते पर संपर्क करें: 1. Mr. Derik Pegado, 9921227057. or 2. Sri Bipin Mehta, Mo. 9920052156, Email: audits@globalpagoda.org;

**Bank Details:** 'Global Vipassana Foundation' **(GVF)**, **Axis Bank Ltd.**, Sonimur Apartments, Timber Estate, Malad (W), Mumbai - 400064, Branch - Malad (W). Bank A/c No.- 911010032397802; IFSC No.- UTIB0000062; Swift code: AXIS-INBB062.

## पगोडा पर रात भर रोशनी का महत्त्व

पूज्य गुरुजी बार-बार कहा करते थे कि किसी धातु-पगोडा पर रात भर रोशनी रहने का अपना विशेष महत्त्व है। इससे सारा वातावरण धर्म एवं मैत्री-तरंगों से भरपूर रहता है। तदर्थ सगे-संबंधियों की याद में ग्लोबल पगोडा पर रोशनी-दान के लिए प्रति रात्रि रु. 5000/- निर्धारित किये गये हैं। अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें– (GVF) (दानदाता को दान का प्रयोजन (pupose) बताना होगा. ताकि उस मद में पैसा जमा हो सके।) **संपर्क:** 1. Mr. Derik Pegado, 9921227057. or 2. Sri Bipin Mehta, Mo. 9920052156, Email: audits@globalpagoda.org


## दोहे धर्म के

सुखद-दुखद संवेदना, विषय स्पर्श-संयोग।
देख अनित्य स्वभाव को, दूर किए भवरोग॥

सुख-दुखमय संवेदना, समता स्थापित होय।
अंतर्मन की ग्रंथियाँ, सहज विमोचित होंय॥

कर्म-ग्रंथि की चित्त पर, जब उदीरणा होय।
तन पर हो संवेदना, मूरख समता खोय॥

देख-देख संवेदना, प्रज्ञा जाग्रत होय।
क्षण-क्षण समता पुष्ट हो, क्षण-क्षण दुख-क्षय होय॥

**केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा0) लिमिटेड**
8, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
*की मंगल कामनाओं सहित*

## दूहा धरम रा

सुख दुख री संवेदना, प्रिय अप्रिय संजोग।
साधक अविचळ ही रवै, दूर हुवै भव रोग॥

आयी दुख संवेदना, मिटसी देर सबेर।
रात बीत कर दिन हुवै, सदा न रवै अँधेर॥

आयी सुख संवेदना, या भी नित्य न होय।
सर सरिता री उरमियां, उठ-उठ खंडित होय॥

देख देख संवेदना, समता मँह थिर होय।
नुवों करम बांधै नहीं, खीण पुरातन होय॥

**मोरया ट्रेडिंग कंपनी**
सर्वो स्टॉकिस्ट-इंडियन ऑईल, 74, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.6, अजिंठा चौक, जलगांव - 425 003, फोन. नं. 0257-2210372, 2212877
मोबा.09423187301, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
*की मंगल कामनाओं सहित*



**"विपश्यना विशोधन विन्यास" के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष :(02553) 244086, 244076.**
**मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, 259, सीकाफ लिमिटेड, 69 एम. आय. डी. सी, सातपुर, नाशिक-422 007. बुद्धवर्ष 2563, ज्येष्ठ पूर्णिमा, 5 जून, 2020**

**वार्षिक शुल्क रु. 30/-, US $ 10, आजीवन शुल्क रु. 500/-, US $ 100. "विपश्यना" रजि. नं. 19156/71. Postal Regi. No. NSK/RNP-235/2018-2020**

Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.) **(फुटकर बिक्री नहीं होती)**

**DATE OF PRINTING: (on-line-edition), DATE OF PUBLICATION: 5 JUNE, 2020**



If not delivered please return to:-
**विपश्यना विशोधन विन्यास**
**धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403**
**जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत**
**फोन : (02553) 244076, 244086,**
**244144, 244440.**
Email: vri_admin@vridhamma.org;
course booking: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org